हाथ-अुद्योग और यंत्र-अुद्योगोंका मेल-१

रजि० नं० बी ४४४८

हरिजनसेवक

दो आना

(स्थापक: महात्मा गांधी)

भाग १५ सम्पादक: किशोरलाल मशरूवाला सह-सम्पादक: मगनभाओी देसाओी अंक ३

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओी देसाओी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद ९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० १७ मार्च, १९५१

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

"शराब आमद समिति"

पिछले अंकमें हम अिस विचार पर आकर रुके थे कि लोगोंमें भी कुछ अैसे वर्ग हैं, जो शराबसे होनेवाली आमदनीका लोभ रखते हैं। लेकिन अुनका यह लोभ कुछ दूसरे प्रकारका है। अिसकी जांच हमने बाकी रखी थी। यह जांच करनेसे पहले शराबकी आमदनीके बारेमें जो बात हमने पिछले अंकमें कही थी, अुसके सम्बन्धमें अेक प्रासंगिक विचार कर लेने जैसा है।

हम देख चुके हैं कि भारतकी सरकारें शराब वगैरा नशीली चीजोंसे होनेवाली आमदनीको छोड़नेके लिअे तैयार नहीं हैं। आजकी पैसेकी तंगीमें अितनी बड़ी रकम पुराने जमानेसे पड़े हुअे रास्ते पर चलकर आसानीसे मिल जाय तो कैसा अच्छा हो! अैसा करनेसे करोड़ों रुपये मिल सकते हैं।

यह अैसी अच्छी बात है कि मुंहमें पानी भी आ जाता है। अिससे प्रजा पर नये कर लगानेकी बदनामी भी टल सकती है। और खास बात तो यह है कि शिक्षित कहे जानेवाले वर्ग भी अिस तरहके कदमका साथ देनेके लिअे तैयार मालूम होते हैं।

अिस तरहका लकीरके फकीर बने रहनेका मानसिक आलस्य नये स्वराज्यकी रचना करनेमें भयंकर माना जायगा। यह मानसिक आलस्य कैसे-कैसे रूप लेता है, अिसका अेक अुदाहरण यहां देने जैसा है।

डॉ० राव दिल्ली युनिवर्सिटीके अर्थशास्त्रके मुख्य अध्यापक हैं। अुन्होंने भारतके बजटके सम्बन्धमें भाषण देते हुअे कहा:

"कुछ राज्योंकी सरकारोंने शराबबन्दीकी नीतिका कड़ा अमल किया, अिससे अुनकी आमदमें करोड़ोंका घाटा हो गया। (कहां हुआ है? क्या अुन्होंने नअी आमद नहीं की है? —म०) यह चीज अुन सरकारोंके लिअे ही नहीं, बल्कि केन्द्रीय सरकारके लिअे भी चिन्ताका विषय है। क्योंकि केन्द्रीय सरकारको केन्द्रसे प्रान्तोंको रुपयेका कर्ज और मदद देनी पड़ती है।"

अैसा कहकर वे आगे सुझाते हैं:

"केन्द्रीय सरकारको तुरन्त अिस बारेमें जांच करनी चाहिये और अिस सम्पूर्ण प्रश्नकी छानबीन कर देखनी चाहिये कि भारतमें शराबबन्दीका अर्थशास्त्र आर्थिक विकासकी दृष्टिसे कैसा माना जा सकता है। और अिस तरहकी जांच तो केन्द्रीय सरकार ही हाथमें ले सकती है। यदि अैसा हो और सम्पूर्ण प्रश्नका विचार **वस्तुलक्षी** और **बुद्धियुक्त** आधार पर हो, तो मेरा विश्वास है कि अुसमें से शराबबन्दीकी नीतिमें सुधार करनेकी बात खड़ी होगी; और पैसेकी तंगीमें कुछ राहत मिलेगी। . . ." (टाअिम्स आफ अिंडिया, ५-३-'५१)

अैसे कुछ गलत विचार और हेतुसे मध्यप्रदेशकी सरकारने अेक समिति नियुक्त की है, जिसके बारेमें अिस पत्रमें कुछ समय पहले चर्चा हो चुकी है। डॉ० राव अब आगे बढ़कर अैसी प्रान्तीय जांचके बदले केन्द्रीय जांचकी मांग करते हैं। यह समझमें न आने जैसी बात है। शराबबन्दीका विषय प्रान्तीय है; शराबकी सारी आमदनी प्रान्तकी होती है। अिस सीधी बातको छोड़कर डॉ० राव यह थोथी दलील देते हैं कि प्रान्तोंकी शराबकी आय खतम हो जानेसे केन्द्रीय सरकार पर भी अुसका असर पड़ता है, और अिस तरह शराबकी आयके साथ वे केन्द्रीय सरकारका सम्बन्ध जोड़ते हैं। अिसमें क्या कारण हो सकता है? कहीं केन्द्रीय सरकार और पंडित जवाहरलाल नेहरूका मत जानकर तो वे अैसा नहीं कहते? वर्ना अिस प्रश्नमें केन्द्रीय सरकारके पड़नेकी जरूरत ही नहीं है। शराबबन्दीके लिअे विधानका जो आदेश है, वह केन्द्रीय सरकारको भी अवश्य मान्य होना चाहिये। अिसलिअे जो प्रान्त शराबबन्दीका अीमानदारीसे प्रयत्न करें, अुन्हें मदद करना केन्द्रीय सरकारका फर्ज है। मदद करना तो दूर रहा, अुलटे यहां तो शराबकी आमदनी फिरसे पानेके लिअे जांच-समिति नियुक्त करनेकी बात हो रही है! विधानके अनुसार केन्द्रीय सरकार या कोअी प्रान्तीय सरकार अैसी समिति नियुक्त नहीं कर सकती।

लेकिन यहां दूसरा प्रश्न भी है। डॉ० राव अेक अर्थशास्त्रीके नाते बोलते मालूम होते हैं। अैसे विशेषज्ञ बहुत बार अेक साधारण भूल यह कर बैठते हैं कि वे अपने क्षेत्रसे बाहर दौड़ जाते हैं। डॉ० रावने अैसी ही भूल की है। शराबबन्दी भारत सरकारकी अेक निश्चित राजनीति है; अुस पर अमल करना अुसका वैधानिक कर्तव्य है। यह नीति किसी अर्थशास्त्रीके तथाकथित 'वस्तुलक्षी' या बुद्धियुक्त आधार पर नहीं खड़ी है। वह अिस देशकी सरकारकी मूलनीतिका सिद्धान्त है। अिसलिअे शराबसे आमदनी प्राप्त करनेकी मैली दृष्टि छूटनी चाहिये। अेक खास विद्याके विशेषज्ञके रूपमें अर्थशास्त्री अिस नीतिको स्वीकार करके चल सकते हैं; और यदि अुन्हें अपनी अिस विद्याका अच्छा ज्ञान हो, तो अुन्हें अिसके रास्ते खोज निकालने चाहियें कि आमदनी घटनेकी स्थितिमें भी सरकार कैसे योग्यतापूर्वक दूसरे अुपायोंसे आमदनी कर सकती है। अभी तक अैसे दो रास्ते खोजे गये हैं और वे अमलमें ठीक साबित हुअे हैं। वे हैं जायदाद-कर और बिक्री-कर। अिनके बारेमें हमने पिछली बार चर्चा की थी। अिसी तरह आमदनी बढ़ानेका कोअी दूसरा सफल और निर्दोष रास्ता मिले तो बता सकते हैं। अिसमें केवल काल्पनिक बातें नहीं चल सकतीं। संभव है अुनके पास अैसा कोअी मार्ग बतानेको न हो। न हो तो वे नम्रतासे अैसा कह दें; अिसीमें अुनकी विद्याकी शोभा है। लेकिन अुसके बदले निश्चित शासननीतिको भूलकर बातें करनेमें अर्थशास्त्र नहीं है। फिर भी यदि वे करें तो वह हमारे देशके हितकी अेक निश्चित नीतिमें गड़बड़ी पैदा करने या करानेकी बात होगी। विशेषज्ञ अपनी विद्याके नाम पर अैसा करें तो वह ठीक नहीं। शराबबन्दीका आधार

www.vinoba.in

पूर्णतया वस्तुलक्षी और बुद्धियुक्त है। सच पूछा जाय तो शराबसे होनेवाली आमदनीका आधार डगमगाता और बुद्धिको भ्रष्ट करनेवाला है। डॉ० राव जैसे विद्वान यदि अिसे न समझें तो यह दुःखकी बात होगी। केन्द्रीय सरकारका रुख देखकर अगर अैसी बातें कही जाती हों, तो अुसमें अेक तरहकी अवसरवादी गैरजिम्मेदारी भी हो सकती है। देशके नये-नये मिले हुअे स्वराज्यको हम अिस तरह खतरेमें न डालें।

७-३-'५१ मगनभाअी देसाअी

(गुजरातीसे)

अन्नका अुत्पादन बढ़ानेकी अेक योजना

भारतमें अन्नकी तंगीकी समस्या दिनोंदिन ज्यादा पेचीदा होती जा रही है। अिस साल अनाजके बारेमें स्वावलम्बी बननेके बदले भारतीय जनताको रेशनमें २५ प्रतिशतकी कमी सहन करनी पड़ रही है और विदेशोंमें अनाजकी भीख मांगनी पड़ रही है। दुर्भाग्यसे अिसके सही आंकड़े अुपलब्ध नहीं हैं कि देशमें अनाजकी निश्चित कमी कितनी है। यहां तक कि देशके कुछ अर्थशास्त्री यह मानते हैं कि हमारे यहां अनाजकी बिलकुल कमी नहीं है और आजकी कठिनाअियां मुख्यतः समाजविरोधी तत्त्वों द्वारा पैदा की हुअी अनाजकी कृत्रिम कमीके कारण हैं। जो लोग अिस मतको स्वीकार नहीं करते, वे भी आम तौर पर यह तो मानते हैं कि अनाजकी सच्ची कमी लगभग १० प्रतिशतसे ज्यादा नहीं है। बेशक, यह कमी अितनी बड़ी असाधारण नहीं है, जिसके कारण सरकार और जनताको अितनी चिन्ता करनेकी जरूरत हो। गोदामोंमें अनाजको सुरक्षित रखनेका ज्यादा अच्छा अिंतजाम करके, सिंचाअीके सुभीते पैदा करके, पड़ती जमीनको खेतीके लायक बनाकर, अन्नकी बरबादीको रोककर, और घटिया लेकिन खाने लायक तथा आम तौर पर अुपेक्षित अनाजोंका अुपयोग करके अब तकमें अनाजकी सालाना कमी पूरी हो जानी चाहिये थी। अिस ध्येयको प्राप्त करनेमें असफल रहना सचमुच भारत सरकारकी अुस बुनियादी नीतिकी दुखद टीका है, जिसका वह जनताके विरोध करने पर भी अनुकरण कर रही है।

मैं दिलसे यह महसूस करता हूं कि आजकी लेवी-वसूलीका तरीका बुनियादी तौर पर गलत है। भारतके अधिकतर राज्योंमें किसानोंको अपनी पैदावारका अेक बड़ा हिस्सा अनिवार्य लेवी-वसूलीकी पद्धतिके कारण छोड़ देना पड़ता है; और सरकार जिन भावों पर किसानोंसे यह अनाज लेती है, वे 'खुले बाजार' या 'कालेबाजार' के भावोंसे काफी नीचे होते हैं। स्वभावतः किसान अिस तरहकी वसूलीका विरोध करते हैं और अुनमें अन्नकी पैदावार ज्यादासे ज्यादा बढ़ानेके लिअे कोअी अुत्साह और अुमंग नहीं रह जाती। वे अपनी जमीनमें अनाजकी फसल पैदा करनेके बदले पैसा देनेवाली फसलें पैदा करते हैं, जो अपेक्षाकृत अच्छे भावोंके कारण ज्यादा आय देती हैं। अिसके अलावा, वे अनाज वसूल करनेवालोंको धोखा देने और कालाबाजारियोंको अपना अनाज बेचनेकी कला सीख लेते हैं। मध्यप्रदेशमें सरकार व्यापारियोंके जरिये अप्रत्यक्ष रूपसे अनाज वसूल करती है। लेकिन अेकन्दर अिसका नतीजा आखिरकार वही होता है। अुत्पादनका स्तर गिरता दिखाअी दे रहा है, क्योंकि किसान और कारखानेदार दोनों चारों तरफ कण्ट्रोलोंसे घिरी हुअी आजकी पद्धतिमें आर्थिक प्रेरणाका कोअी प्रकाश महसूस नहीं कर रहे हैं। ब्रिटेन जैसे जाग्रत और प्रगतिशील देशमें भी यही हुआ है। अिसलिअे भारत जैसे गरीब देशमें किसानोंसे केवल देशभक्ति और त्यागकी अपीलें सुनकर अनाजका अुत्पादन बढ़ानेकी आशा नहीं रखी जा सकती। 'अधिक अन्न अुपजाओ आन्दोलन' को व्यावहारिक रूप देकर सफल बनानेसे पहले लोगोंको अुचित आर्थिक प्रेरणा देनेकी जरूरत महसूस की जानी चाहिये।

यह कैसे सिद्ध किया जा सकता है? अिसके लिअे मैं यहां अेक निश्चित और ठोस सुझाव रखना चाहता हूं। सरकारको लेवी-वसूलीकी मौजूदा नीति छोड़कर खुले बाजारोंकी और नियंत्रित भावोंसे सीमित रेशन देनेकी पद्धति चालू करनी चाहिये। सरकार सिर्फ अुन्हीं लोगोंको सस्ता रेशन देनेकी व्यवस्था करे, जो दर असल 'खुले बाजार' के भावों पर खाद्य वस्तुअें नहीं खरीद सकते। अुदाहरणके लिअे, २०० रुपयेसे कम माहवार कमानेवालोंको अिस श्रेणीमें माना जा सकता है। अलबत्ता, हर प्रदेशमें यह आंकड़ा बदलेगा। सरकार रेशनकी दुकानोंमें मिलनेवाले अनाजोंके तफसीलवार भाव भी हर महीने प्रकाशित कर सकती है। ये भाव आमदनीके विभिन्न स्तरों और खरीदी जानेवाली मात्राके आधार पर बदल सकते हैं। अिसके अलावा, सरकारी दुकानोंमें केवल मोटा लेकिन साफ अनाज (यानी दूसरे या तीसरे दर्जेका लेकिन सड़ा हुआ या कंकर-मिट्टी वगैरा मिला हुआ नहीं) ही दिया जाय। अिस जिम्मेदारीको अदा करनेके लिअे सरकार नीचे भावों पर अनाज वसूल करनेके बजाय अुसे स्वतंत्र या खुले बाजारमें खरीदे और रेशनकी दुकानों पर सस्ते भावोंमें बेचे। अिस तरह सरकारको जो नुकसान होगा, वह अुसकी तरफसे दी हुअी आर्थिक सहायता मानी जाय। आज भी विदेशोंसे जो अनाज मंगाया जाता है, अुस पर सरकार अिस तरहकी सहायता देती है। यह पैसा देशके बाहर चला जाता है, और देशके गरीब किसानोंको सरकारी खजानेसे किये जानेवाले अिस अतिरिक्त खर्चसे कोअी लाभ नहीं मिलता। अिसके बदले, सरकारको चाहिये कि वह हमारे ही किसानोंसे खरीदे हुअे अनाज पर अैसी सहायता दे और खेतोंमें दिन-रात मेहनत करनेवाले किसानोंको यह महसूस करने दे कि वे जमीन पर की हुअी अपनी कड़ी मेहनतका पूरा फल पा सकते हैं। सरकारका यह फर्ज होगा कि वह शहरोंमें, खास करके अनाजकी कमीवाले हिस्सोंमें, सस्ती रेशनकी दुकानोंका अुचित प्रबन्ध करे; ग्राम्य प्रदेशोंमें केवल बिना जमीनवाले मजदूरोंको ही अिन सुविधाओंसे लाभ अुठाने दिया जाय। शहरों और गांवोंके बाकी लोगोंको अपनी जरूरतका अनाज खुले बाजारसे खरीदनेकी छूट रहे। अिस योजनासे कअी स्पष्ट लाभ होंगे। पहला, 'काले बाजार' का कलंक और अुससे पैदा होनेवाले नैतिक पतनका कुचक्र अपने आप मिट जायगा। दूसरा, आर्थिक सहायताके रूपमें राज्य जो रकम खर्च करेगा, अुसका काफी हिस्सा वह बिक्री-कर और क्रमिक आय-करकी अनुकूल पद्धति द्वारा पुनः प्राप्त कर सकेगा; ये कर अुन व्यापारियोंसे लिये जायेंगे, जो खुले या स्वतंत्र बाजारमें अनाजका व्यापार कर सकेंगे। तीसरा, बाजारमें अच्छे दाम मिलनेके कारण किसानोंको अनाजकी पैदावार बढ़ानेका प्रोत्साहन मिलेगा। चौथा, समाजके ज्यादा गरीब वर्गोंको नियंत्रित भावों पर रेशन मिलता रहेगा और खुशहाल लोगोंको आजके 'काले बाजार' के बदले 'सफेद' बाजारसे खाद्य पदार्थ खरीदनेका सन्तोष मिलेगा।

अिस योजनाके सुझानेमें मैं कोअी मौलिकताका दावा नहीं करता। पिछले साल अपने युरोपके दौरेमें मैंने जेकोस्लोवाकियामें अैसी योजनाको सफलतासे काम करते देखा है। गरीब लोगोंके लिअे खोली हुअी कुछ सस्ती और सरकारी सहायता पानेवाली रेशनकी दुकानोंके साथ-साथ खुले बाजारके होनेसे देशसे कालाबाजारका खातमा हो गया था और राज्य खुले बाजारके व्यापार पर लगाये गये बिक्री-कर और आयकरसे काफी मात्रामें सरकारी खजानेको बढ़ा सका था। मैं कोअी कारण नहीं देखता कि भारतमें भी अैसा प्रयोग क्यों नहीं किया जा सकता?

अिस योजनाके खिलाफ पहला अेतराज यह अुठाया जा सकता है कि अनाजोंके अूंचे भाव फिरसे मुद्रा-प्रसारके चक्रको गति दे देंगे। लेकिन अिस कारणसे डरनेकी जरूरत नहीं, क्योंकि सरकार समाजके ज्यादा गरीब वर्गोंको सस्ते भावसे अनाज बेचकर मुद्रा-प्रसारको रोक

www.vinoba.in

सकेगी और मजदूरीके दरोंमें वृद्धि करनेका भी कोअी कारण नहीं रहेगा। अिसके अलावा, अनाजोंके अूंचे भाव तो आज भी हैं ही। अिस नअी योजनासे जो महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होगा, वह यह है कि कालेबाजारकी जगह खुले बाजारमें अनाजका व्यापार होगा, जिससे कर लगाने योग्य अतिरिक्त आय होगी। सरकार दूसरे दो तरीकोंसे भी संभावित मुद्रा-प्रसारको रोक सकती है। पहला, किसानोंको अुनकी पैदावारकी पूरी कीमत नकद चुकानेकी जरूरत नहीं; कीमत चुकाते समय राज्य किसानोंको सोना और चांदी देकर भी ज्यादा अनाज पैदा करनेकी प्रेरणा दे सकती है। आज भी किसान अपने पैसेको गहनोंके रूपमें बदल डालते हैं, लेकिन ग्रामवासियोंकी जरूरतोंका नाजायज फायदा अुठाकर दलाल खूब नफा कमाते हैं। गरीब किसान सचमुच सरकारका आभार मानेगा, अगर वह सस्ते भावों पर सोना और चांदी पा सके। दूसरा, किसानोंको अनाजकी पूरी कीमत नकद या सोने-चांदीके रूपमें चुकानेके बजाय सरकार अुनको दिये जानेवाले पैसेका कुछ भाग ज्यादा अच्छे मकान, सहकारी खेती और खरीद-बिक्री जैसी सामूहिक कल्याणकी योजनाओंमें लगा सकती है। किसानोंकी सम्मतिसे अुन्हें अैसी सहकारी समितियोंके शेयर दिये जा सकते हैं। अिससे लोगोंको यह अेतराज करनेका भी मौका नहीं मिलेगा कि गांववालोंके हाथमें अधिक क्रयशक्तिके आ जानेसे वे नशीली चीजों और बरबादी भरी सामाजिक और धार्मिक विधियोंमें अुसका दुरुपयोग करेंगे।

अिस योजनाके विरुद्ध कुछ अर्थशास्त्रियोंकी दूसरी दलील यह है कि अनपढ़ किसान अभी आर्थिक लाभसे प्रोत्साहित होनेके अभ्यस्त नहीं हुअे हैं। अगर वे अपनी खेतीकी पैदावारसे ज्यादा कमाअी कर सकें, तो संभव है वे अपनी पूरी जमीन जोतनेकी भी परवाह नहीं करें। अुनकी शंका यह है कि किसानोंको अुनकी पैदावारकी ज्यादा अूंची कीमतें देनेकी यह योजना अुन्हें ज्यादा पैदा करनेकी प्रेरणा देनेके बजाय संभव है आखिरमें कम पैदा करनेकी प्रेरणाका रूप ले ले। मेरे विचारसे अिसमें कोअी विवेक नहीं है और यह आम जनताकी मौजूदा मनोवृत्तिका सम्पूर्ण अज्ञान प्रगट करता है। आजका औसत ग्रामीण बुद्धिमान व्यक्ति है, जो आधुनिक समाजमें पाअी जानेवाली आर्थिक प्रेरणासे आसानीसे लाभ अुठाता है।

अेक बात और है। लेवी-वसूलीकी जगह सरकार जमीनका भाड़ा और लगान अनाजके रूपमें वसूल कर सकती है, जो नियंत्रित भावसे किसानोंसे लिया जाय। लेकिन आज अनाज संग्रह करनेकी क्षमताका और सरकारी अधिकारियोंकी अीमानदारीका जो स्तर है, अुसको देखते हुअे शायद यह तरीका सफल न हो। यह तरीका राष्ट्रीय संकटके समय ही अपनाया जा सकता है, जब रेशनकी दुकानोंके लिअे अनाजका संग्रह करना निहायत जरूरी हो जाय।

अन्तमें, मैं यह नहीं सुझाना चाहता कि लेवी-वसूलीका मौजूदा तरीका बदलने मात्रसे भारतकी अन्न समस्या अपने आप हल हो जायगी और किसानोंके ज्यादा अनाज पैदा करनेके प्रयत्नसे अनाजकी कमी पूरी हो जायगी। अिसके बाद भी ज्यादा अच्छा बीज, सिंचाअीकी सुविधाअें, खाद, ढोर और खेतीके औजार वगैराकी दूसरी सब योजनायें जरूरी रहेंगी। लेकिन अिसमें मुझे कोअी शक नहीं कि लेवी-वसूलीका आजका तरीका छोड़ देनेसे ज्यादा अनाज पैदा करनेके रास्तेमें खड़ी अेक बहुत बड़ी रुकावट निश्चित रूपसे दूर हो जायगी।

यह योजना मैं संघकी सरकार, राज्योंकी सरकारों और राष्ट्रीय नियोजन कमीशनके सामने गंभीर विचारके लिअे पेश करता हूं। आशा है अुन्हें यह आजमाने लायक मालूम होगी।

वर्धा, २०-२-'५१ श्रीमन्नारायण अग्रवाल

(अंग्रेजीसे)

लोक-सम्पत्तिका आदर्श रक्षक

स्वर्गीय श्री ठक्कर बापाको जिन लोगोंको अुनके सम्पर्कमें आनेका सौभाग्य मिला, अुन सबने बड़ी हार्दिक श्रद्धांजलियां दी हैं। मैं अिसे अपना गौरव मानता हूं कि मैं अुनकी कुछेक संस्थाओंका आडीटर (लेखा-निरीक्षक) था। अपने पूरे कार्यकालमें अुन्होंने कभी भी, अप्रत्यक्ष ढंगसे ही क्यों न हो, मुझसे न तो संस्थाओंके कामकी कमियां या गलतियां कम करके दिखानेके लिअे कहा और न अनुकूल रिपोर्ट लिखनेके लिअे ही। अुलटे, जहां कहीं गलतियां हो गअी हों, वहां अपना काम सुधारनेकी दृष्टिसे वे हमेशा न्याय्य और प्रामाणिक आलोचनासे खुश ही होते थे। यदि कभी जरूरत होती तो मेरी रिपोर्टकी चर्चा करनेके लिअे वे मुझे खास समय देते थे; तब सारी रिपोर्टका अेक अेक पैरा, अेक अेक वाक्य पढ़ जाते, और वे अपने कर्मचारियोंसे रिपोर्टके आक्षेपोंका जवाब देनेके लिअे और अुसकी सूचनाओं पर विचार करनेके लिअे कहते। जब तक वे मेरा, और किसी भी बाहरी निरीक्षकसे ज्यादा सावधान अपनी अन्तरात्माका समाधान न कर लेते, तब तक अुन्हें चैन नहीं मिलता था।

अुनकी सचाअी, कर्तव्यके प्रति अुनकी पूरी निष्ठा, शिस्त-पालन, कामकी व्यवस्था और हिसाब-किताबमें सावधानी आदि अुनके अनेक गुण अुनके सहकारियों और दूसरे कर्मचारियोंके लिअे पदार्थ-पाठकी तरह थे। हरिजन सेवक संघके भवनमें जाता, तो मंदिरमें जानेसे जितना मिलता है, अुससे भी अधिक आनन्द मुझे मिलता। अुनके सहवाससे वही लाभ होता जो किसी व्यावहारिक ज्ञानीके चरणोंमें बैठनेसे होता है और अुनसे बातचीत करना मानो अुनके ज्ञान और अनुभवका अमृत पीना था। अुनसे ज्यादा अुत्साह, सचाअी और अपने अुपेक्षित 'बालकों'के साथ परिपूर्ण अेकरसता मैंने किसी औरमें नहीं देखी। संस्थाकी पाअी-पाअी संभालकर रखी जाय, खर्च की जाय, और प्रत्येक हितकी पूरी रक्षा हो, अिसका वे जितना आग्रह रखते, अुतना मैंने किसी दूसरेमें नहीं पाया। कअी संस्थाओं और समितियोंमें पदाधिकारियोंका व्यवहार अुतना साफ-स्वच्छ नहीं होता, जितना जनता अुनसे रखनेकी आशा करती है। कअी संस्थाओंमें तो कार्यकर्त्ता अपने पवित्र ट्रस्टके प्रति गुनाहकी हद तक लापरवाह होते हैं, अपने पदका अनुचित लाभ अुठाते हैं और अपने स्वार्थके लिअे अपने अधिकारोंका दुरुपयोग करते हैं। पदाधिकारी जैसे होते हैं, वैसे ही मातहत कर्मचारी भी, क्योंकि बेअीमानी और भ्रष्टाचारकी गति पानीकी तरह अूपरसे नीचेकी ओर होती है। अगर पदाधिकारी बेअीमान हों, तो कर्मचारी अीमानदार नहीं हो सकते।

कर्म और वचनमें अुनका अनुसरण करके और अुनके जीवन-कार्यको जारी रखकर और लगातार बढ़ाकर ही अुनकी पावन आत्माको हम बड़ीसे बड़ी श्रद्धांजलि और अधिकसे अधिक सन्तोष दे सकते हैं। हमें अुनका यह काम अुसी निर्मल प्रामाणिकतासे करना चाहिये, जो अुनके जीवन और कार्योंमें सोलह कलाओंमें अुतरी थी।

दिल्ली जगदीशप्रसाद

(अंग्रेजीसे)

सच्ची शिक्षा

ले० — गांधीजी

अनु० — रामनारायण चौधरी

अिस पुस्तकमें शिक्षाका स्वरूप, आदर्श, माध्यम वगैरा आजके शिक्षा सम्बन्धी प्रश्नोंका अुत्तर गांधीजीके शब्दोंमें पाठकोंको मिलेगा।

कीमत २-८-० डाकखर्च ०-१०-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद — ९

www.vinoba.in

हरिजनसेवक
१७ मार्च १९५१

हाथ-अुद्योग और यंत्र-अुद्योगोंका मेल – १

"हैरिस"का पट्टू और खादी

अेक ब्रिटिश पत्र-लेखिकाने मेरे पास 'हैरिस ट्वीड' नामके अूनी कपड़ेका नमूना भेजा है। (यह कपड़ा काश्मीरी पट्टू जैसा है, पर रंग और डिजाअिनमें अुससे अलग है।) और साथमें अुन्होंने यह सवाल पेश किया है:

"पता नहीं साथमें जो चीज भेज रही हूं अुसमें आपके पहचानवाले किसीकी दिलचस्पी होगी या नहीं।' अिस कपड़ेको 'हैरिस ट्वीड' कहते हैं और यह स्काटलैण्डके वायव्यमें हेब्रिडिस नामके द्वीपपुंजसे आता है। यह नमूना पिछली ठण्डमें अटलांटिक सागरके अेक छोटे द्वीप 'स्कार्प'की किसी स्त्रीने स्थानीय अूनसे काता था और बादमें हैरिस द्वीपमें सामान्य हाथ-करघे पर बुना गया था। रंग तो आजकल रासायनिक ही होते हैं, अलबत्ता स्वाभाविक रंगोंको छोड़कर। अिन द्वीपोंमें दो ही अुद्योग हैं — मछली मारना और अपनी अुपजका अून बुनना। कातना तो अब प्रायः बन्द है। सिर्फ कुछ बूढ़ी स्त्रियां कातती हैं, बाकी लोग तो अुसे स्थानीय मिलोंमें ही धुनवाते और कतवाते हैं। मिलोंसे जब वह वापिस आता है, तो पुरुष अुसे हाथ-करघों पर बुन लेते हैं। स्त्रियां अपना कातना जारी रखें, अिसकी कोशिश अब नाकामयाब मालूम होती है; क्योंकि अैसा कातना आर्थिक दृष्टिसे लाभदायक नहीं है, अुसमें आवश्यक कमाअी नहीं होती। यह अेक लाचारी है, नहीं तो यहां ठण्डके लम्बे मौसममें जब दिन बहुत छोटा और अंधेरा ज्यादा होता है यह अेक बड़ा अुपयोगी और दिलचस्प अुद्योग होता। अैसे मौसममें, ठीक कामके अभावमें लोगोंका जी भारी हो जाता है और कअी तो अिससे ग्लानिकी बीमारीके शिकार हो जाते हैं।

"आप 'हरिजन'में हाथ-कताअीके सवालोंकी चर्चा करते रहते हैं। अिन द्वीपोंकी परिस्थितिके प्रसंगमें मुझे अुस चर्चामें रस आता है। हाथ-कताअी परवड़ती नहीं, आर्थिक दृष्टिसे वह लाभप्रद नहीं है, अिस आरोपका मैं जानना चाहूंगी आप क्या जवाब देते हैं; क्योंकि मुझे लगता है कि यहांकी मनोवृत्तिके अनुकूल अुसका कुछ रूपान्तर कर लेने पर वह यहांके लिअे भी अुपयोगी होगा। मैं बहुत चाहती हूं कि कोअी विज्ञ पुरुष अिस सवालका सही हल दे, और यह परम्परा मरे नहीं।"

अिन द्वीपोंके निवासियोंका सवाल हमारे हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअी करनेवालों जैसा ही है। अुनका सवाल बहुत छोटा है, हमारा देश-व्यापी है और किसी अेक ही अुद्योग तक महदूद नहीं बल्कि अनेक अुद्योगोंसे ताल्लुक रखता है।

हम जानते हैं कि कताअी आजकल प्रायः सारी-की सारी मिलोंमें ही होती है। गांधीजीने जब कताअीका आन्दोलन चलाया, अुस समय हमारे देशके अधिकांश हिस्सोंमें यह चीज बिलकुल मर चुकी थी; यहां तक कि बम्बअी राज्यमें गांधीजीकी अुम्रका व्यक्ति भी नहीं जानता था कि चरखा होता कैसा है। गांधीजीने बड़ी दौड़-धूप की, तब कहीं गुजरातसे अुन्हें अेक-दो नमूने मिले, और कुछ बूढ़ी स्त्रियोंका पता लगा जिन्होंने कभी चरखा काता था।

हाथ-करघेकी बुनाअीकी बात अैसी नहीं है। वह आज भी जैसे-तैसे चलती है। अगरचे तरक्की पर नहीं है। करघोंके लिअे पर्याप्त सूत मिलनेमें हमेशा कठिनाअी रही है, और हर साल अुनकी संख्या कम ही होती चली गअी है।

गांधीजी अिस नतीजे पर पहुंचे थे कि यदि हाथ-कताअीको छोड़ दिया गया, तो कालान्तरमें हाथ-बुनाअी भी मर जायगी। क्योंकि कताअीके बारेमें वह सस्ती नहीं है, आदि जो आर्थिक कारण दिये जाते हैं वे बुनाअीके बारेमें भी बताये जा सकते हैं। जब तक मिल-मालिकोंको अपना सूत अपनी मिलोंमें ही बुनना लाभप्रद मालूम होता है, और जब तक ग्राहक केवल सस्तेपनका ही खयाल करते हैं, तब तक बुनकरोंको मिलोंसे पर्याप्त सूत नहीं मिलेगा और न वे मिल-कपड़ेकी कीमतकी ही होड़ कर सकेंगे। अिसलिअे यदि हाथ-करघोंको कायम रखना है, तो हाथ-कताअीको पुनः जीवित करना ही पड़ेगा।

अिसके सिवा, कताअी तो शहरकी मिलोंमें हो और बुनाअी गांवोंमें हाथ-करघों पर, अिस पद्धतिमें ही दोष है। देहात कपास पैदा करें, बिनौलेसे अुसे अलग करें, गांठोंमें बांधें और शहरोंमें भेजें। फिर शहरमें वे गांठें खोली जायें, बांधी हुअी रुअी दुबारा फैलाअी जाय, धुनकी जाय, अुसकी पूनीयां बनाअी जायं और अुसे काता जाय। और तब फिर अिस सूतको पुनः गांठोंमें बांधा जाय और गांवोंमें भेजकर अुसका वितरण किया जाय। वहां हाथ-करघों पर जब अुसे बुन लिया जाय, तब तीसरी बार अुसका अधिकांश हिस्सा बिकनेके लिअे शहरोंको रवाना किया जाय। यह लाने-ले जानेकी सारी मेहनत और खर्च बेकार है, और तभी तक चल सकता है जब तक कि बुननेकी मिलोंकी संख्या काफी नहीं है। हाथकी बुनाअी तो हाथकी कताअीके साथ ही चल सकती है। हाथकी कताअी न रहे तो बुनाअी भी ज्यादा दिन नहीं ठहर सकती। दोनों मिलकर भी नहीं ठहर सकतीं, यदि परिस्थिति अुन्हें मिलके अुसी किस्मके कपड़ेकी होड़ करनेके लिअे मजबूर करे। तब असल जरूरत है दोनोंकी होड़ रोकनेकी।

होड़ न हो, अिसके संभव अुपाय ये हो सकते हैं:

(क) हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअी पर सिर्फ अैसा कलापूर्ण और विशेष डिजाअिनोंका माल तैयार किया जाय, जिसे कलाके आश्रयदाता मांगते हैं और जो मिलोंमें नहीं बन सकता। लेकिन अिसका यह अर्थ है कि हमारे समाजमें बड़ी-बड़ी सामाजिक और आर्थिक विषमताअें होंगी, और वे चलती रहेंगी। अिसके सिवा अिससे तो सिर्फ मुट्ठी भर कुशल कारीगरोंको काम मिलेगा। अिस हालतमें अैसा नहीं हो सकता कि हाथ-कताअी गांवके हरअेक घरका गृह-अुद्योग बन जाय। गांवमें प्रचलित बड़ी बेकारी, गांवोंसे शहरोंमें जाने, गांवोंके खाली होते रहने और शहरोंके बेहद बढ़ते जानेकी प्रवृत्ति, आदि सवाल अिस तरह हल नहीं हो सकते।

(ख) लोग अुसे भावनावश आश्रय देते रहें और तात्त्विक, आध्यात्मिक और स्वावलम्बनकी दृष्टिसे महंगाअीका खयाल न करते हुअे अुसका अुत्पादन करते रहें। तथा सरकार भी बेकारी दूर करनेकी सीमा तक या अपना नाम करनेके लिअे, चाहे अुसकी अुपयोगितामें अुसका विश्वास हो या न हो, अुसकी मदद करती रहे।

(ग) सरकार यह माने कि हाथ-कताअी, हाथ-बुनाअी तथा अिसी तरहके दूसरे ग्रामोद्योगों, और अुत्पादन तथा माल ढोनेके देहाती साधनोंकी व्यवस्था राष्ट्रकी रक्षाके लिअे आवश्यक दूसरी कतारकी तरह है। और अुसे मजबूत रखना है।

मेरा मत है कि अिस अन्तिम अुपायसे ही अुत्पादनके तथा माल ढोनेके विभिन्न तरीकोंमें चल रही होड़ दूर हो सकती है। अुद्योगोंके यंत्रीकरण और आदमी कम करके खर्च घटानेकी प्रवृत्तिसे तथा सीमा पारसे बड़ी संख्यामें लोगोंके आ जानेसे जो बेकारी बढ़ी है, वह भी अिसी तरह दूर हो सकती है। गांवोंकी खेतीकी अुन्नति और ग्रामीण जीवनकी समृद्धिका भी यही अेक रास्ता है। भारतमें ये जीवन-मरणके सवाल हैं; हमें तो अुन्हें हल करना ही पड़ेगा। मुमकिन है कि दूसरे देशोंको अपनी छोटी अुलझनें सुलझानेमें

www.vinoba.in

हमारी कोशिशोंसे कुछ मदद मिल जाय। जिन तत्त्वोंके आधार पर अैसी कोशिश कामयाब हो सकती है, अुनकी छान-बीन मैं अगले लेखमें करूंगा।

वर्धा, १-३-'५१ कि० घ० मशरूवाला
(अंग्रेजीसे)

सामूहिक खेतीके खिलाफ

श्री वालजीभाअी देसाअी लिखते हैं:

"यह जानकर खेद हुआ है कि सामूहिक खेतीके लिअे बढ़ रहे वर्तमान पागलपनके शिकार आप भी हो गये। मुझे लगता है कि यदि आप जार्ज हेण्डर्सनकी लिखी और फेवर कं० द्वारा प्रकाशित 'किसानकी अुन्नति' (Farmer's Progress) पुस्तक पढ़ें, तो आपका खयाल बदल जायगा। अिस पुस्तक पर लिखते हुअे किसी समीक्षकने 'स्पेक्टेटर' अखबारमें यह कहा है:

> "आर्थिक दृष्टिसे अुपयुक्त किसी खेतका विस्तार ठीक क्या हो, अिसकी जांच-पड़ताल आजकल काफी जोरशोरसे हो रही है। खेतीके अर्थशास्त्री तो आवेशपूर्वक यह कहते हैं कि यह खेत, प्रेरी या रैंच जैसे बड़े मैदानोंकी तरह, अनेक अेकड़ोंका होना चाहिये। अैसी हालतके रहते हुअे यह देखकर बड़ी खुशी होती है कि कोअी अैसा भी है जो छोटी और मिश्र खेतीकी — जिसका सारा काम किसान और अुसका परिवार खुद कर लेता हो — हिमायत करता है, अैसी छोटी खेतीको ही सबसे ज्यादा लाभदायी मानता है और अिसके पक्षमें अपने प्रत्यक्ष काम और अनुभवका प्रमाण भी देता है। अुक्त लेखककी राय है कि हरअेक खेत पर मवेशियोंके चार जूथ पालने चाहियें, और अुन्हें करीब-करीब पूर्ण रूपमें खेतमें अुगाये हुअे घासचारे पर पुराने ढंगसे पोसना चाहिये।"

मनुष्यकी रहन-सहन और अुसके कामका ढंग आसपासकी परिस्थितियोंके अनुसार बदलता है। अपनी निजी खेतीकी जमीन और मवेशी होना, तथा अपने ही लाभके लिअे काम करना, परम्पराका गहरा संस्कार मनुष्यके मन पर हर देशमें रहा है, और है। हम भी अुससे मुक्त नहीं हैं। सिर्फ तथाकथित जमींदार और पूंजीपति ही जमींदार और पूंजीपति हैं, अैसी बात नहीं। बेजमीन किसान, और पूंजीपतिका मुंशी और घरेलु नौकर भी मनसे अुसी श्रेणीमें हैं, फर्क अितना ही है कि अिनकी ये कामनायें अभी सुप्तावस्थामें हैं। हमारा यह विश्वास बन गया है कि जब तक वैयक्तिक संपत्ति और लाभकी प्रेरणा न हो, तब तक मेहनतसे काम करनेकी अिच्छा किसीको हो नहीं सकती। लेकिन तब सवाल यह अुठता है कि किसी मनुष्यके पास कितनी संपत्ति हो और कितनी जमीन हो। आखिर, अुसकी कुछ सीमा तो होनी ही चाहिये। अिस सवालका अुत्तर यदि यह दिया जाय कि अुसकी कोअी मर्यादा तय करनेकी आवश्यकता नहीं है, तो पूंजीवाद, जमींदारी, राजाकी निरंकुश सत्ता, साम्राज्यवाद आदि व्यवस्थाओंका आना अनिवार्य हो जाता है और अैसी व्यवस्थाओंका संचालन गुलामों और नौकरोंके द्वारा ही हो सकता है। यदि यह कहा जाय कि किसी आदमीको सिर्फ अुतनी ही जमीन, पूंजी या अुत्पादनके साधन आदि रखने चाहियें, जितने वह अपनी मेहनतसे संभाल सके, अुससे अधिक नहीं, तो आर्थिक दृष्टिसे यह चीज व्यावहारिक नहीं सिद्ध होती। भारत और चीन जैसे घनी बस्तियोंके देशोंमें जमीन अितनी नहीं है कि हर आदमीको अलग-अलग बांट दी जाय, और फिर भी अितनी काफी हो कि अुससे अुसका निर्वाह हो जाय। यही बात संपत्तिके दूसरे रूपों और अुत्पादनके दूसरे साधनोंकी भी है। यदि आजकी प्रचलित पूंजीवादी या जमींदारी व्यवस्थाका फल यह हुआ ह कि अधिकांश जनताको जानवरों-जैसी असह्य परिस्थितियोंमें अपनी जिन्दगी बितानी पड़ रही है, तो अत्यधिक बंटवारेकी व्यवस्थाका फल भी कुछ अच्छा नहीं होगा; बल्कि वह अिससे बदतर होगा, तब और भी ज्यादा लोगोंको अैसा असह्य जीवन बिताना पड़ेगा। अैसी व्यवस्था अपनी ही पैदा की हुअी कठिनाअियोंके बोझसे दबकर टूट जायगी, और तब जमींदारी या पूंजीवादकी कोअी नअी व्यवस्था अुठ खड़ी होगी। कारण यह है कि पूंजीवादका यह बुनियादी तत्त्व हम कायम रखते हैं कि वैयक्तिक स्वामित्व ही काम करनेका अुत्साह देता है। यह तत्त्व आध्यात्मिक दृष्टिसे तो दूषित है ही, लेकिन आजकी जीवन-परिस्थितियोंमें, जब जमीन और संपत्ति अितनी नहीं है कि लोग अलग-अलग रह सकें, और अपना निर्वाह बखूबी कर सकें, वह नैतिक दृष्टिसे भी गलत हो गया है।

आध्यात्मिक और नैतिक दोनों ही दृष्टिबिन्दुओंसे आज हमारा यह कर्तव्य हो गया है कि हम वैयक्तिक लाभके हेतुसे मेहनतकी महिमा समझना, और किसी विशेष खेत पर अपना स्वामित्व रखनेकी अभिलाषा छोड़ें। मेहनतके प्रति अेक अुच्चतर दृष्टि अपनानेकी आवश्यकता है। हिन्दुओंमें प्रचलित संयुक्त परिवार और कुलकी संस्था ज्यादा अुदार दृष्टिकोणको जन्म देती थी, हालांकि अुसका दायरा रक्त और वंशकी अेकताकी संकरी सीमा तक ही था। अिस विचारका यह दायरा अब हमें बढ़ाना चाहिये, और रक्तकी बनिस्बत ज्यादा विशाल सम्बन्धोंमें यह दृष्टि फैलाना चाहिये।

मैंने जिस खेतीकी प्रणालीकी सूचना की है, वह जिसे अकसर सामूहिक खेती कहा जाता है, वही नहीं है। मैंने अुसे खेतीका समाश्रय नाम दिया है। अुसे संयुक्त परिवारकी संयुक्त खेतीका अेक बढ़ाया हुआ रूप समझ सकते हैं, जिसमें अेक हद तक व्यक्तियोंको खानगी लाभ भी रहेगा। यह पद्धति बहुत बड़े-बड़े खेतोंका आग्रह नहीं करती, पूरे गांवकी जमीन अेक संयुक्त खेतीकी तरह जोती-बोयी जाय, अैसा भी नहीं चाहती। खेत कितना बड़ा हो, यह तो वहांकी जमीनके अुपजाअूपन पर निर्भर होगा। साधारणतः वह अितना बड़ा हो कि अुस पर २०-२५ परिवार मिलकर काम कर सकें।

गांधीजी बहुत सोच-विचारके बाद अिस नतीजे पर आये थे, और मेरी अिससे पूरी सहमति है, कि सिर्फ खेतीका धन्धा किसी आदमीके लिअे, अुसके विकासकी दृष्टिसे, पूरा नहीं है, और अिसलिअे ठीक नहीं है। खेती, गो-पालन, और छोटे-छोटे अुद्योग, अिनके मेलसे व्यवसायकी अिकाअी बनाना चाहिये। अिसके सिवा, किसानके सम्पूर्ण विकासके लिअे यह भी जरूरी है कि वह कोअी हाथका काम भी सीखे और करे। अिस समाश्रय पद्धतिकी हिमायत अिसलिअे नहीं की गयी है कि यंत्रोंका अुपयोग बढ़े; अुसका अुद्देश्य सिर्फ यही है कि मनुष्य और मवेशीकी शक्तिका पूरा-पूरा अुपयोग हो।

खेतीकी ही तरह, पशु-पालनके सम्बन्धमें भी कुछ लोगोंका यह खयाल है कि हर घरमें अेक गाय या भैंस होनी चाहिये। कुछने तो यहां तक कहा है कि गाय या भैंसका पालना हर किसानके लिअे कानून द्वारा आवश्यक बना दिया जाय। यह सवाल अेक बार गांधीजीके सामने छेड़ा गया था। श्रोताओंकी अुम्मीदके खिलाफ गांधीजीने यह राय दी कि वे हर घर या खेतमें गायों-बैलोंके अैसे अलग-अलग पालनके पक्षमें नहीं। गायें अलग-अलग आदमियोंकी हों, लेकिन गांव भरके सब ढोर अेक साथ रखे जायं और सबकी सामूहिक संभाल की जाय। वे डेरी (गो-शाला) के पक्षमें थे, डेरी-संस्था गो-पालनके क्षेत्रमें समाश्रय-पद्धतिका ही अुदाहरण है। खेतीमें भी अिसी विचारका प्रयोग किया जाना चाहिये। तब तो हम अिस आदर्श पर पहुंचेंगे कि — 'सबै भूमि गोपालकी'।

वर्धा, २७-२-'५१ कि० घ० मशरूवाला
(अंग्रेजीसे)

www.vinoba.in

हिमालयके सबक — २

नीलकंठमें

नीलकंठमें लोगोंने वहांके केवल दो खानगी मकानोंमें से अेक मकान मेहरबानी करके अुपयोगके लिअे हमें दे दिया। वे दोनों नेपालके राजपरिवारके थे। ये मकान आम तौर पर खाली ही रहते हैं; अिसका अनिवार्य परिणाम यह है कि वे धीरे धीरे लेकिन निश्चित रूपसे जीर्ण-शीर्ण होते जा रहे हैं। मकानके दरवाजे और खिड़कियां अितनी सख्त हो गयी थीं कि अुन्हें खोलना बन्द करना बड़ा कठिन था। रसोअीघरकी छत ही नदारद थी। फिर भी बाकीका मकान लम्बा-चौड़ा था और बरसातसे हमारा बचाव कर सकता था। हमारी यात्रामें हमें बादमें मालूम पड़ा कि यह भी अेक अैसा वैभव था, जो हमें आगे देखनेको नहीं मिल सकेगा!

नीलकंठ महादेवका छोटासा मंदिर दो छोटे पहाड़ी झरनोंके संगम पर बना हुआ है। अुसके तीनों तरफ अूंची पहाड़ियां खड़ी हैं। जिस मकानमें हम ठहरे थे, वह मुख्य झरनेकी दाहिनी तरफ सौ गजकी अूंचाअी पर पहाड़की अेक बाजूको काटकर समतल बनाअी हुअी जमीनके छोटेसे टुकड़े पर खड़ा था। वहांसे मन्दिरके आसपास खड़े छोटे-छोटे झोंपड़ोंके छप्पर दिखाअी देते थे। अुनके आसपास सघन झाड़ी थी। नीलकंठका मंदिर अेक पुराने पीपलके बाहुपाशमें जकड़ा हुआ था।

योग्य स्थानकी खोज

मैंने तुरन्त आश्रमकी शाखा खोलनेके लिअे आसपास योग्य स्थानकी खोज करना शुरू किया। लेकिन यह आसान काम नहीं था। यद्यपि ये पहली पर्वत श्रेणियां बहुत अूंची (३००० से ५००० फुट) नहीं हैं, लेकिन वे अेकदम सीधी हैं। अुनके नीचे गहरी घाटियां हैं। वहां शायद ही कोअी जमीनका समतल हिस्सा या समतल रास्ता देखनेको मिलता है। पहले मैं खूब चल सकती थी, लेकिन अब ५८ सालकी अूमरमें अिन सीधी चढ़ाअीवाले रास्तों पर चढ़ना मुझे कठिन मालूम हुआ। मानको मैंने वापिस पशुलोक भेज दिया था, क्योंकि यहां अुसके रहने या चरने लायक कोअी जगह नहीं थी; अिसके अलावा, आजकल अुसके सामनेके पांव अितने मजबूत नहीं रह गये थे कि वह सीधी चढ़ाअीवाले पहाड़ी रास्तों पर चढ़ सके। फिर भी नकशा देखकर और पासकी पहाड़ियों परसे चारों तरफ नजर दौड़ाकर मैंने आसपासके प्रदेशकी स्पष्ट कल्पना कर ली। आसपासके गावोंसे ग्रामवासी भी आने लगे थे। हरअेक समझाता कि अुसका गांव आश्रमकी स्थापनाके लिअे कैसा आदर्श स्थान है। अिस बातसे खुशी होती थी, लेकिन बहुत लाभ नहीं हुआ!

किसानोंकी समस्यायें

दिन प्रतिदिन मैं जैसे-जैसे आसपासके प्रदेशका निरीक्षण करती गअी और ग्रामवासियोंकी बातें सुनती गअी, वैसे-वैसे कितनी ही बातोंका मुझे विश्वास होता गया। सबसे ज्यादा ध्यान खींचनेवाली बात यह थी कि गांववालोंको सरकारकी तरफसे कोअी व्यावहारिक मदद या मार्गदर्शन नहीं मिलता था — वे केवल सरकारका कर भरते थे और बदलेमें परेशानियां अुठाते थे। मैदानोंमें मुझे जो महसूस होता था, वही यहां अिन पहाड़ियोंमें दूने वेगसे महसूस हुआ; वह यह कि गांवके लोग सरकारके कारण नहीं बल्कि अुसके कारण होनेवाली परेशानियोंके बावजूद अपना जीवन किसी तरह बिताते ह।

हिमालयके समस्त प्रदेशमें सीढ़ियोंकी तरह अेकके अूपर अेक फले हुअे खेतोंमें खेतीका सारा कामकाज होता है। चावलके खेत तो अच्छी तरह बने होते हैं, लेकिन दूसरे अितनी बुरी तरह बनाये जाते हैं कि हरसाल अुनकी मिट्टी बरसातमें धुलती जाती है और जगह-जगह खड्डे और खाअियां बढ़ती जाती हैं। अिन खेतोंको तैयार करना और अुनकी मरम्मत करना बड़ा कठिन होता है और किसानोंके गरीब और अुपेक्षित होनेसे हालत दिनों दिन बिगड़ती जा रही है। नीलकंठके आसपासके प्रदेशमें अुनके गृहअुद्योगोंकी हालत भी अच्छी नहीं है। हाथकताअी और हाथ-बुनाअीकी अुपेक्षा की जाती है। आधुनिक रहन-सहनवाले मैदानी प्रदेशके लोगोंके गाढ़ सम्पर्कमें आनेके कारण निचले पहाड़ी प्रदेशमें रहनेवाले लोगोंकी मेहनत करनेकी ताकत और कामकी लगन भी खतम हो गअी है। ये किसान नीचे हरद्वार और देहरादूनकी चमकती हुअी बिजलीकी बत्तियां देखते हैं और पतिंगोंकी तरह आगमें गिरकर अपना नैतिक और शारीरिक ह्रास कर लेते हैं।

यहांके पहाड़ोंकी गायोंकी दूध देनेकी शक्ति अितनी कम हो गअी है कि अब वे रोजाना आधा सेरसे ज्यादा दूध नहीं देतीं। जो गाय दो सेर दूध देती है, वह बहुत अच्छी मानी जाती है। अिसका खास कारण यह मालूम होता है कि अिस प्रदेशमें अच्छे सांड़ोंकी कमी है। जो स्थानीय सांड़ मैंने यहां देखे, वे बहुत छोटे थे—वे मैदानी प्रदेशके १५ माहके बछड़ेसे बड़े नहीं थे।

बकरीके बच्चेका करुण अन्त

जिस मकानमें हम लोग ठहरे थे, अुसके सामनेकी सीधी पहाड़ी पर चौकीदारकी अेक छोटी झोंपड़ी और सीढ़ियों जैसे खेत थे। मैं परिवारके लोगोंको आते-जाते देखा करती थी। मेरा ध्यान बकरीके अेक छोटे बच्चेकी तरफ खास करके आकर्षित हुआ, जो झोंपड़ीके सामने रस्सीसे बंधा रहता था। वह घरके बच्चोंके साथ खेला करता था। और अपने मालिकोंसे बहत हिल गया था। जब सारा परिवार खेतोंमें काम करनेको बाहर चला जाता था, तब वह बच्चा जोरसे बें-बें चिल्लाता और अुनके लौटने पर बड़े आनन्दमें अुनका सत्कार करता था। अेक दिन मैंने चढकर अस झोंपड़ी तक जानेका सोचा और मनमें कहा — "मैं बच्चेके लिअे थोड़ा चना ले जाअूंगी और अुसके साथ थोड़ी देर खेलूंगी।" लेकिन अेक-दो दिन बाद अुसकी आवाज वहां नहीं सुनाअी दी और वह दिखाअी भी नहीं दिया। अुस शामको स्वामीजी और भवानीसिंहने घूमकर लौटनेके बाद बताया कि चौकीदारके परिवारसे रास्तेमें अुनकी भेंट हो गयी, जो पासके भुवनेश्वरी देवीके मंदिरसे टोकरीमें बकरीके बच्चेके अवशेषोंको लेकर लौट रहा था! मांसकी दावत अुड़ानेके पहले अुन लोगोंने देवीके सामने अपने छोटे दोस्तकी बलि चढ़ाअी थी! अुन पर क्रोध करना बेकार है। अगर हमारे अितने नजदीक रहनेवाले लोग भी अभी तक पशुबलि देनेमें अन्ध-श्रद्धा रखते हैं, तो यह हमारा दोष है; हमें अुन लोगोंमें जाग्रत भावनायें और विश्वास फैलाकर अैसे रिवाजोंको बन्द करानेका ठोस प्रयत्न करना चाहिये।

पवित्र स्थानोंकी दुर्दशा

दुर्भाग्यसे हम अैसे समय नीलकंठ आये थे, जब वहां तीर्थयात्राका मौसम चल रहा था। रविवार और सोमवारके दिन वह जगह यात्रियोंसे खचाखच भर जाती थी। कभी-कभी अुस छोटीसी घाटीमें दो सौसे अूपर यात्री अिकट्ठे हो जाते थे। मन्दिरके पासकी धर्मशालामें जब यात्रियोंकी भीड़ बहुत बढ़ जाती, तो बचे हुअे लोग हमारे पासके मकानमें आ जाते। सबसे बुरी बात तो यह है कि वहां सफाअीकी कोअी व्यवस्था नहीं थी और जब तक सारी गन्दगी धूल जानेके लिअे पानीकी दो-चार तेज बौछारें नहीं गिर जातीं, तब तक बाहर पांव रखना अशक्य हो जाता। यह दुर्दशा कोअी नीलकंठकी ही नहीं है, बल्कि अुत्तराखंडके सारे मंदिरों और तीर्थयात्राके मार्गोंकी यही हालत है। दूसरे प्रदेशोंकी तरह अिन हिस्सोंके तथाकथित धर्मके रक्षक और सेवक भी भक्तोंके दानोंसे प्राप्त होनेवाली अपार सम्पत्ति अिकट्ठी करते हैं। लेकिन अिस सम्पत्तिका क्या होता है? अुसका बहुत थोड़ा भाग यात्रियोंकी सुख-सुविधाके लिअे या पवित्र मन्दिरोंकी

www.vinoba.in

शुद्धि और शृंगारके लिअे खर्च किया जाता है। धर्मशालायें बहुत कम हैं, सफाअीकी कोअी व्यवस्था नहीं है और पवित्र मंदिरोंके आसपासकी जगह सुन्दर फूलों और फलोंसे नहीं सुशोभित की जाती — जैसी कि की जानी चाहिये; अिसके बदले वहां चारों तरफ मैला बिखरा होता है, पेशाबकी असहय दुर्गन्ध आती है; साथ ही, न वहां पवित्रताका वातावरण होता, न वैदिक मंत्रोंका अुद्घोष; न आत्माको अूंचा अुठानेवाली विधि-अनुष्ठान होते, न धर्मशास्त्रोंका पठन-पाठन। वहां होता है केवल मनमाना शोरगुल, और कुछ नहीं। जो लोग पवित्र स्थानोंकी अिस दुर्दशाके लिअे जिम्मेदार हैं, वे कभी यह कहते नहीं थकते कि 'हिन्दूधर्म खतरेमें है'। हिन्दूधर्मको सबसे बड़ा खतरा अिन्हीं धर्मके ठेकेदारोंसे है।

मच्छर, खटमल और रोग

जैसे-जैसे दिन बीतते गये, नीलकंठकी आबहवा ज्यादा-ज्यादा परेशान करनेवाली होती गयी। बादल बिलकुल हमारे सिरको छूने लगे, जोरोंकी वर्षा होने लगी और अूपरसे मच्छर और खटमल भी सताने लगे। किसीकी तबियत अच्छी नहीं रहती थी। कृष्णमूर्ति जितनी बार हमारे कैम्पमें आये, अुतनी बार पशुलोक लौटते ही तेज बुखारके शिकार बने। आखिरकार अुन्होंने कह दिया कि मुझे नीलकंठ आनेमें भी डर लगता है। मेरा स्वास्थ्य जो शुरूसे ही काफी खराब था, यहां आकर ज्यादा बिगड़ गया। आजकल कामकाजका ज्यादा बोझ पड़ता है या आबहवा मेरे अनुकूल नहीं होती या दोनों बातें अेक साथ अिकट्ठी हो जाती हैं — और नीलकंठमें अैसा ही हुआ — तो मेरा सिर जोरोंसे दर्द करने लगता है और अैसा लगता है मानो मैं बीमार पड़ गयी हूं। नतीजा यह होता है कि मैं बहुत कमजोर हो जाती हूं। नीलकंठमें अेकके बाद अेक मुझ पर अैसे तीन हमले हुअे, और आखिरी तो बड़े जोरोंका हुआ। अब यह साफ मालूम हो गया था कि नीलकंठ आश्रमकी शाखाके लिअे अुपयुक्त स्थान नहीं है, और हम सबको महसूस हुआ कि यह स्थान जितनी जल्दी छोड़ दिया जाय, अुतना ही अच्छा। लेकिन जायें कहां और अैसे मौसममें वहां पहुंचें कैसे?

(अंग्रेजीसे) **मीरा**

बहादुरकी अहिंसा

अेक गांवकी सीमा पर हम थोड़ी देर ठहरे। यह गांव हमारे रास्तेमें पड़ता था। अिसलिअे अुसके बारेमें विस्तारसे जानकारी पानेका लोभ हो आया। ज्यों ही ठहरे कि तुरन्त गांवके लोग दौड़कर हमारे पास आये। दो-चार आदमी तो मानो पलभरमें हमारे पास पहुंच गये। हमने अुनसे थोड़ी पूछताछ की। समय हो रहा था, अिसलिअे हमने फिर चलना शुरू किया। गांवके लोगोंमें से कुछने दूरसे हमारा स्वागत किया। कुछ लोग हमारे साथ चलने लगे। अेक कुआं आया। अुसके पासकी जमीन धंस गअी थी, अिससे कुअेंको भारी नुकसान पहुंचा था। अुसका वर्णन चल रहा था। अितनेमें अेक आदमीकी तरफ हमारी नजर गअी। अुसके हाथकी अंगुलियां कटी हुअी मालूम होती थीं। हमें पूछें अुससे पहले ही अुस भाअीने अपनी रामकहानी शुरू की। अेक दृष्टिसे वह बात छोटी थी; दूसरी दृष्टिसे बड़ी थी। 'जिलाकर जीओ' अिस सूत्रके बनिस्बत 'मरकर जिलाओ' यह सूत्र ज्यादा मूल्यवान है। आज अणुबम या अुससे भी ज्यादा भयंकर हथियारों पर श्रद्धा रखनेवाले देश लोकशाही और मानवताकी बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। भारत जब न्यायका पक्ष लेकर तटस्थ रहता है, तब अुसकी हंसी अुड़ाते हैं। अैसी स्थितिमें अेक गांवमें घटी हुअी छोटीसी घटना भी हममें कितनी बड़ी आशाका संचार कर देती है!

बात यह थी कि अेक शिकारी अेक मनोहर मोर पर अपनी बन्दूकका निशाना लगा रहा था। अितनेमें अेक करुण चित्कार सुनाअी दी। "ठहरो भाअी, ठहरो! तुम अपने शौकके लिअे अिस निर्दोष, निरीह प्राणीको क्यों मारते हो?" शिकारीकी बन्दूक हिल गअी। अुसके हृदयको गहरा आघात लगा। लेकिन अुसका असर थोड़ी देर ही टिका। अुसने फिरसे बन्दूक तानी और निशाना लगाया। वह बोलनेवाला नजदीक आ गया और कहने लगा: "मुझमें प्राण हैं, तब तक मैं अिस मोरको नहीं मरने दूंगा।" यह बोलनेवाला गांवठी आदमी था। ठाकरड़ा (आजकल क्षत्रिय ठाकुर कहलानेवाली) नामकी हलकी मानी जानेवाली जातिका वह अेक सीधा, भोलाभाला आदमी था। वह न तो किसी बड़ी संस्थाका सदस्य था, न वह कोअी अहिंसाका झंडाधारी सैनिक था। वह तो अेक साधारण मनुष्य था। कूदते-खेलते मोरकी अिस बिना कारण होती हुअी हत्याको देखकर अुसके भीतरकी आत्मा तिलमिला अुठी थी। वह शिकारी भी कोअी साधारण आदमी नहीं था। वह गुस्सेसे जल रहा था। अैसे मनपसन्द शिकारको मारनेमें गांवके अैसे मामूली आदमीके रुकावट डालनेसे रुक जाना अुसे स्वाभिमानके खिलाफ मालूम हुआ। अुसका अहं अिसे सह न सका। अुसने चुनौती देते हुअे कहा: "अे बेवकूफ, हट जा सामनेसे। वर्ना अपनेको मरा हुआ ही समझ लेना।" बस फिर क्या था? वह बहादुर ग्रामवासी अुसकी बन्दूक और मोरके बीच आकर खड़ा हो गया और बोला: "चलाओ बन्दूक।" और बन्दूक छूटी। मोर बच गया और वह आदमी गोलियोंसे छिद गया। शिकारी हारा अितना ही नहीं, बल्कि निष्प्राण जैसा हो गया। अुसके पश्चात्तापका पार न रहा। लेकिन अब क्या हो सकता था? बन्दूक तो छूट चुकी थी। दूसरा कोअी होता तो अिस घटनासे होनेवाली प्रतिक्रियासे पहले ही भाग जाता। लेकिन वह शिकारी नहीं भागा। वह अुस ग्रामवासीकी भक्तिपूर्ण हृदयसे सेवा करने लगा। गांवके लोग दौड़ कर आ पहुंचे। छरें तो बहुतसे लगे थे। लेकिन सौभाग्यसे वह बहादुर ग्रामवासी बच गया। अुसने अुत्तेजित बने हुअे अपने गांवके लोगोंको ठण्डा किया। शिकारीके दिल पर अिसका गहरा असर क्यों न हो? घायल हुआ साधारण मनुष्य अुसे कितना महान लगा होगा! घायल मनुष्यने शिकारीको बिदा किया। शिकारी गया और घायलकी सार-संभालके लिअे पैसे देता गया। घायल थोड़े ही समयमें अच्छा हो गया। अंगुलियों, हाथ वगैरा पर छरोंके निशान रह गये। वे निशान 'अहिंसकके जीवन' के जीते-जागते प्रतीक ही थे न?

मैंने सोचा, कुदरत कितनी रहस्यमयी है! शहरमें अैसा हुआ होता, तो अिस कहानीके बहादुर नायककी अखबारोंमें कितनी तारीफ होती, अुसकी बहादुरीका कैसा आकर्षक वर्णन छपता! लेकिन अिस बहादुर ग्रामवासीके लिअे अैसा कुछ भी नहीं हुआ होगा। गांवोंमें अैसे कितने ही रत्न छिपे पड़े होंगे! हमारे कुछ देरके लिअे रुक जानेसे कितना लाभ हो गया! अैसा सोचते हुअे हम आगे बढ़े।

('विश्ववात्सल्य' गुजराती साप्ताहिकसे) **सन्तबाल**

आसाम भूकंप राहत कोष

[ता० ५-३-'५१से १०-३-'५१ तक]

नाम और स्थान		रु० आ० पा०
मांगरोलके लोगोंकी तरफसे — द्वारा श्री जमशेदजी	मांगरोल	१०-०-०
श्री मजूरमहाजन संघ	सिद्धपुर	९५८-०-०
" जीवणलाल गोरधनदास शाह	पंडोली	१०-०-०
पहुंच दी जा चुकी रकम		२८,२०३-१०-३
कुल रु०		२९,१८१-१०-३

www.vinoba.in

अेक बेढंगी योजना

अखबारोंमें हाल हीमें अेक योजना प्रकाशित हुअी है कि दिल्लीमें १२००० वर्गफुटके घेरेमें लगभग ११० फुट अूंची और आजकलकी सारी सुविधाओंसे पूर्ण अेक बड़ी अिमारत बनायी जाय। अिस भवनका बाहरी आकार, सीमेंट और पत्थरसे बांधी गअी अेक बड़ी अिमारतके लिअे जिस हद तक यह संभव हो, चरखा कातते हुअे गांधीजी जैसा होगा। अिमारतके रूपमें गांधीजीकी यह विकृति, या गांधीजीके रूपमें अिमारतकी यह विकृति बिलकुल ही निरर्थक न दिखे, अिसलिअे यह सुझाया गया है कि अुसे गांधीजीके स्मारककी तरह बनाया जाय और अुसमें अुनके सब अवशेषों, चिट्ठी-पत्री, और साहित्य आदिका संग्रह किया जाय। अुस पर अनुमानसे ४०-५० लाख रुपया खर्च होगा। अगर खबरका विश्वास किया जाय तब तो अधिकारियोंने अिस योजनाको मंजूर भी कर लिया है, और अुसके लिअे जगह भी चुन ली है।

मुझे खेद है कि मैं अिस विचारको पसन्द नहीं कर सकता। गांधीजीकी शिक्षा और अुनके सन्देशसे अिसका कोअी मेल नहीं है। यह तो पैसेकी बरबादी है, खासकर अिस कठिन कालमें यह खर्च किसी भी सार्वजनिक निधिसे नहीं किया जाना चाहिये, गांधीजीकी स्मारक निधिसे तो हरगिज नहीं। गांधी-निधिका अुपयोग कितने ही रचनात्मक कामोंके लिअे किया जा सकता है, जिन्हें पैसेकी बहुत जरूरत भी है। अिन निधियोंका पैसा खर्च करनेके लिअे अैसी बेढंगी, भद्दी और खर्चीली योजनाओंकी जरूरत नहीं है।

अिसका आशय यह नहीं है कि गांधीजीके कागज-पत्र वगैरा, गांधी-साहित्यके पुस्तकालय, या शोध-कार्यके लिअे किसी भवनकी आवश्यकता है ही नहीं। लेकिन गांधी-स्मारक-भवन आदर्श, सादगी और अुपयोगितापूर्ण सुन्दरताका नमूना होना चाहिये। वह किसी मनमानी विचित्र सुन्दरताका नमूना हो, और अुस पर अैसा बेहिसाब खर्च हो, यह बात असह्य है। मैं अुम्मीद करता हूं कि यह विचार छोड़ दिया जायगा।

वर्धा, ६-३-'५१
(अंग्रेजीसे) कि० घ० मशरूवाला

सवाल—जवाब

पशु-बलिदान

सवाल—निम्बाहेड़ा गांवसे छः कोस पर आवरा माताजीके स्थान पर नित्य ही बकरोंका बलिदान होता रहता है। नवरात्र और मेलेके समय विशेष। वहांके अधिकांश सवर्ण लोग अिसके पक्षमें नहीं हैं। धर्मके नाम पर होनेवाले अिस बलिदानको रोकनेके लिअे अेक समितिका निर्माण किया गया है। वह लोकमत तैयार करेगी और राजस्थान सरकारसे बलिदान बन्द करवानेका प्रयत्न करेगी। यह अुचित है या नहीं?

जवाब—पशु-बलिदानके विरुद्ध लोकमत अवश्य तैयार करें। लेकिन मेरी रायमें सरकारसे बलिदान बन्द करवानेका प्रयत्न न करना चाहिये। यदि सरकार आहारके लिअे पशुवधको रोक नहीं सकती, तो धर्मके नाम पर होनेवाले बलिदानको भी कानूनसे रोकना ठीक नहीं। हमें यह याद रखना चाहिये कि जो जिसका आहार करता है, अुसका ही बलि चढ़ाता है। अिसलिअे बलिशुद्धिके पहले आहारशुद्धि होनी चाहिये।

वर्धा, २४-२-'५१ कि० घ० मशरूवाला

महादेवभाअीका पूर्वचरित

ले०—नरहरि परीख

अनु०—रामनारायण चौधरी

कीमत ०-१४-० डाकखर्च ०-३-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद-९

विनोबाकी पैदल यात्रा

विनोबा कल प्रातःकाल (ता० ८ मार्च) पवनारसे शिवराम-पल्ली, (हैदराबाद) जानेके लिअे निकल रहे हैं। वे पैदल यात्रा करेंगे और शिवरामपल्लीमें राष्ट्रीय सप्ताहके दिनोंमें जो सर्वोदय सम्मेलन हो रहा है अुसके पहले वहां पहुंच जायेंगे। यह निर्णय अुन्होंने कल सर्व-सेवा-संघकी अेक बैठकमें किया, जहां अुनसे यह आग्रह किया गया कि यदि सम्मेलनको भाषणों और पैसेकी बरबादीका अेक तमाशा नहीं बनने देना है, तो यह जरूरी है कि वे अुसकी रहनुमाअीका बोझ अुठायें। अुन्होंने लोगोंकी अिस दलीलका बल महसूस किया और चूंकि वे वाहनका अुपयोग नहीं करना चाहते, अिसलिअे अुन्होंने पैदल जानेका निश्चय कर लिया। अिस निर्णयका सबने स्वागत किया, क्योंकि अिससे हजारों ग्रामवासियोंको सर्वोदयका सन्देश अुनके मुंहसे सुननेका अवसर मिलेगा। अुन्हें लगभग ३०० मील चलना होगा और अिस सिलसिलेमें मध्यप्रदेश तथा हैदराबाद रियासतके कअी जिलोंसे वे गुजरेंगे।

मैं नहीं कह सकता कि सम्मेलनमें क्या चर्चायें होंगी। लेकिन अेक सन्देश है जिसका प्रचार करनेकी विनोबाकी तीव्र अिच्छा है, और जिससे वर्धाके सारे रचनात्मक कार्यकर्ताओंकी सहमति है। १२ फरवरीके दिन आजकल देशभरमें यहां वहां सर्वोदय मेले भरते हैं। सर्वोदय-विचारमें जिसकी श्रद्धा है, अैसे हरअेक व्यक्तिको चाहिये कि अुसमें अपने हाथ-कते सूतकी अेक गुंडी दे। अेक आदमी अेक गुंडी, यह मानो सर्वोदयके पक्षमें अपना मत जाहिर करनेका तरीका है। जो लोग सर्वोदयकी सफलताके लिअे काम करनेकी अिच्छा रखते हैं, अुनके लिअे यह अेक काम है। अिसके प्रचारमें वे अपना योग दें। यह सन्देश हर गांव, और शहरमें और अुनके हर घरमें पहुंचना चाहिये। और कार्यकर्त्ताओंको देखना चाहिये कि अुस पर पूरा अमल हो।

अुनके अिस प्रवासका हाल हम समय-समय पर विस्तारपूर्वक जाननेके लिअे अुत्सुक रहेंगे। हम प्रार्थना करते हैं कि भगवान अुनकी अिस यात्रामें अुनके पथ-प्रदर्शक और रक्षक हों।

वर्धा, ७-३-'५१ कि० घ० मशरूवाला
(अंग्रेजीसे)

हमारा नया प्रकाशन

सर्वोदयका सिद्धान्त

संसारके सारे भागोंके लोग गांधीजीके जीवन और विचार-धारामें, खासकर जनवरी १९४८ में अुनके निर्वाणके बादसे, दिनोंदिन ज्यादा रस ले रहे हैं। वे गांधीवादी जीवन-पद्धतिके बारेमें अधिकाधिक जानना चाहते हैं, जो अनेक लोगोंके विचारसे दुनियाकी आजकी संकटपूर्ण स्थितिमें से बच निकलनेका अेकमात्र मार्ग है। सर्वोदय गांधीवादी जीवन-पद्धतिका केवल दूसरा नाम है।

आशा है यह छोटीसी पुस्तिका सर्वोदयके सिद्धांत और कार्यक्रमके बारेमें जिज्ञासु लोगोंके लिअे सहायक सिद्ध होगी।

कीमत ०-१२-० डाकखर्च ०-२-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद—९

विषय-सूची

		पृष्ठ
"शराब आमद समिति"	मगनभाअी देसाअी	१७
अन्नका अुत्पादन बढ़ानेकी अेक योजना	श्रीमन्नारायण अग्रवाल	१८
लोक-संपत्तिका आदर्श रक्षक	जगदीशप्रसाद	१९
हाथ-अुद्योग और यंत्र-अुद्योगोंका मेल—१	कि० घ० मशरूवाला	२०
सामूहिक खेतीके खिलाफ	कि० घ० मशरूवाला	२१
हिमालयके सबक—२	मीरा	२२
बहादुरकी अहिंसा	सन्तबाल	२३
आसाम भूकंप राहत कोष		२३
अेक बेढंगी योजना	कि० घ० मशरूवाला	२४
सवाल-जवाब	कि० घ० मशरूवाला	२४
विनोबाकी पैदल यात्रा	कि० घ० मशरूवाला	२४

www.vinoba.in